M.A. Fourth Semester

Third Paper

Agriculture Geography

BY

Dr. Shivanand Yadav

Assistant professor and Head

Department of Geography

Harishchandra P.G.College ,Varanasi

प्र० :- भारत के कृषि विकास पर जोत क्षेत्र के आकार के प्रभाव का विवेचन कीजिए तथा अपना अभिमत दीजिए।

जोत क्षेत्र का आकार और कृषि विकास (उत्पादिता)

"Size of Holding and Productivity"

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था कि "समानता तथा सामाजिक न्याय की माँग है कि भूमि का अनुभाजन किया जाये। उन्होंने बड़े भूस्वामियों से एक निश्चित सीमा (अधिकतम निर्धारित सीमा) से अधिक अपनी भूमि के एक भाग का परित्याग करने की विनम्र अपील की थी। ताकि इस प्रकार प्राप्त फालतू भूमि को समाज के कमजोर वर्गों में बाँटा जा सके। इससे भूमि के स्वामित्व में व्याप्त असमानताओं को कम करने में काफी सहायता मिलेगी।"

उल्लेखनीय है कि भारत में भूमि जोतों का औसत क्षेत्रफल 1985-86 में 1.69 हेक्टेयर था जो वर्तमान में घटकर पुनः 1.50 रह गया है। लगभग 32.1 प्रतिशत जोत धारक 1 हेक्टेअर से 4 हेक्टेअर के बीच की जोत इकाइयों का संचालन करते हैं। यह संचालन क्षेत्रफल सम्पूर्ण जोतों का लगभग 37.9% है। इनमें से बहुत कम जोतें आर्थिक कही जा सकती हैं। कृषि की मौजूदा तकनीक की दृष्टि से अधिकांश जोतें अनार्थिक हैं। ऐसी अनार्थिक इकाइयों का आकार जनसंख्या विस्फोट से बढ़ रही असमानता के कारण और छोटा और अनार्थिक होता जा रहा है। देश में 1 हेक्टेअर से कम वाली सीमान्त जोतों की संख्या कुल जोतों का 57.8% है।

जोत उप-विभाजन और विखण्डन: Sub-Division and Fragmentation of Holdi

हमारे देश में खेती का एक बहुत बड़ा दोष यह है कि यहाँ पर अधिकांश जोतें बहुत छोटे आकार की और दूर-दूर तक बिखरी पड़ी हैं, इसका उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

जोत की विभिन्न अवधारणाएं:- (Various Concepts of Holding) कृषि सुधार समिति (Agrarian Reforms Committee) ने जोतों के संबंध में निम्न तीन प्रकार की अवधारणाओं का उल्लेख किया है।

(i) **आर्थिक जोत:** Economic Holding:- अर्थात जोत का ऐसा आकार जिससे औसत कृषक परिवार को पूर्ण रोज़गार मिल सके और वह उचित जीवन प्राप्त करने में समर्थ हो सके।

(ii) **बुनियादी जोत:** Basic Holding: यह ऐसी जोत होती है जिसके अंतर्गत कुशल ढंग से खेती की जा सकती है। यह आर्थिक जोत से कम आकार की होती है।

(iii) **इष्टतम जोत:** Optimum Holding:- वह जोत जिसका आकार ऐसा होता है, जिसमें कृषक की प्रबंध क्षमता और उसके वित्तीय संसाधन भरपूर ढंग से पूरी तरह इस्तेमाल किया जा सके। समिति के विचार में इष्टतम जोत आर्थिक जोत के तीन गुने से अधिक नहीं होनी चाहिए।

भूमि सुधार नामिका (Panel on Land Reforms) ने पारिवारिक जोत (Family Holding)

का उल्लेख किया है। पारिवारिक जोत से आशय, जिससे 1600 रुपये की कुल आय या 1200 रुपये की निवल आय प्राप्त हो सके और उसका क्षेत्रफल इतना हो कि एक औसत परिवार एक जोड़ी बैल इस्तेमाल कर सके।

आर्थिक जोत का आकार निर्धारित करने वाले तत्व :- FACTORS ON which the Economic holding depends: आर्थिक जोत का आकार निर्धारित करने वाले तत्व स्थान-स्थान व प्रदेश-प्रदेश के साथ भिन्न-भिन्न होते हैं।

(i) **भौगोलिक तथा जलवायु संबंधी दशाएं :-** इसमें भूमि की उर्वरता, मिट्टी, नमी, जलवायु, पानी की उपलब्धता आदि बातें शामिल हैं। इन दशाओं में कौन सी फसलें उग सकती हैं कौन सी नहीं, इससे जोत का आकार प्रभावित होता है।

(ii) **खेती की तकनीक और विधियाँ :-** जोत का आकार इस बात पर भी निर्भर करता है कि खेती का कौन सा तरीका और तकनीक उपयोग में लाया जाता है। परम्परागत खेती की तकनीक व विधियों की अपेक्षा नई तकनीक और विधियों के प्रयोग से उत्पादन कई गुना बढ़ सकता है।

(iii) **कृषि नीति :-** कृषि और कृषकों से सम्बन्धित सरकारी नीति भी जोत के आकार पर प्रभाव डालती है। जैसे - यदि सरकार गेहूं या बागान वाली फसलों की खेती को बढ़ाने की नीति अपनाती है तो स्वतः छोटी जोतें लाभकारी नहीं हो पायेगी।

जोत का उचित आकार :- Proper Size of Holding:- कुछ अर्थशास्त्री भारत में खेती की तकनीक के आधार पर 10 एकड़ की जोत को आर्थिक जोत मानते हैं। कुछ के अनुसार आर्थिक जोत का आकार 5 एकड़ है। कुछ अन्य लोगों के अनुसार पर्याप्त भोजन के उत्पादन के लिए प्रति व्यक्ति एक एकड़ क्षेत्र आवश्यक है। इस हिसाब से पाँच सदस्य वाले परिवार के लिए 5 एकड़ की जोत उचित है।

जोत उपविभाजन और विखण्डन का विस्तार :- जोत उपविभाजन से आशय खेतों के उन टुकड़ों से है जो भूमि विभाजन के कारण छोटे-छोटे हो गये हैं। यह देश में कृषि इकाई की लघुता का प्रधान कारण है। विखण्डन से तात्पर्य किसी किसान की जोत के उन टुकड़ों से होता है जो एक साथ मिले न होकर दूर-दूर बिखरे या छितरे हुए होते हैं। यह कृषि की इकाई के छोटे होने का दूसरा कारण है।

भारत में अधिकांश जोतें बहुत छोटे आकार की हैं तथा समय के साथ-साथ यह आकार और छोटा होता जा रहा है। 1985-86 के विभिन्न

जोत का औसत आकार (हेक्टेअर में)

देश	औसत आकार
(i) अर्जेण्टाइना	270 हेक्टेअर
(ii) यू.एस.अमेरिका	158 "
(iii) इंग्लैण्ड	55 "
(iv) भारत	1.6 "
(v) जापान	1.0 "

आँकड़ों के अनुसार भारत में जोत का औसत आकार 1.6 हेक्टेयर था।

भारत में भू-जोतों का वितरण :-

जोतों की श्रेणी	क्रियाशील जोतों की संख्या (हजारों में)		क्षेत्रफल (हजार हेक्टेअर)		क्रियाशील जोतों का औसत आकार (हेक्टेअर में)	
	1980-81	1985-86	80-81	85-86	80-81	85-86
1 हेक्टेयर से कम	50122 (56.4%)	56147 (57.8)	19735 (12.1)	22042 (13.4)	0.39	0.39
1 हे. से 2 हेक्टेअर	16072 (18.1)	17922 (18.5)	23169 (14.1)	25708 (15.6)	1.44	1.43
2 हेक्टेअर से 4 हे.	12455 (14.0)	13252 (13.6)	34645 (21.2)	36666 (22.3)	2.78	2.77
4 हेक्टेअर से 10 हेक्टे.	8068 (9.1)	7916 (8.1)	48543 (29.6)	47144 (28.6)	6.04	5.96
10 हेक्टेअर तथा उससे अधिक	2166 (2.4)	1918 (2.0)	37705 (23.0)	33002 (20.1)	17.41	17.21
समस्त जोतें	88883 (100.0)	97155 (100.0)	163791 (100.0)	169562 (100.0)	1.84	1.69

* कोष्ठक में दी गयी संख्या कुल का प्रतिशत है।

भारत में जोतों के छोटे आकार के कारण :-

(i) देश की बढ़ती हुई आबादी के कारण (ii) उत्तराधिकार के नियम के कारण क्योंकि सभी बच्चे पैतृक सम्पत्ति के समान भाग के अधिकारी होते हैं। (iii) संयुक्त परिवार प्रणाली के विघटन के कारण भी जोतें टुकड़ों में बँट गयी हों (iv) हस्तशिल्प और ग्रामोद्योग के पतन से भी लोग खेती करने को मजबूर हुए हैं जिससे जमीन और भी अधिक टुकड़ों में बँट गयी है। (v) भूमि को केवल आय का साधन न समझकर उसे प्रतिष्ठा और सम्मान का मुख्य आधार मानना व प्रत्येक व्यक्ति द्वारा पैतृक भूमि में अपने हिस्से की माँग करना भी जोतों के छोटे होने का प्रमुख कारण है।

विभिन्न राज्यों में जोत की उच्चतम सीमाएं :

राज्य	जोत की सीमा (हेक्टेयर में) दो फसलों के साथ सिंचित भूमि	एक फसल के साथ सिंचित भूमि	शुष्क भूमि
आन्ध्र प्रदेश	4.05 से 7.28	6.07 से 10.93	14.16 से 21.85
असम	6.74	6.74	6.74
बिहार	6.07 से 7.28	10.12	12.14 से 18.21
गुजरात	4.05 से 7.29	6.07 से 10.93	8.09 से 21.85
हरियाणा	7.25	10.9	21.8
हिमाचल प्रदेश	4.05	6.07	14.14 से 28.33
जम्मू कश्मीर	3.60 से 5.06	3.6 से 5.06	5.95 से 9.20 (लद्दाख में (7.7))
कर्नाटक	4.05 से 8.10	10.12 से 12.14	21.85
केरल	4.86 से 6.07	4.86 से 6.07	4.86 से 6.07
मध्य प्रदेश	7.28	10.93	21.85
महाराष्ट्र	7.28	10.93 से 14.57	21.85
उड़ीसा	4.05	6.07	12.14 से 18.21
पंजाब	7.00	11.00	20.50
राजस्थान	7.28	10.93	21.85 से 70.82
तमिलनाडु	4.86	12.14	24.28
त्रिपुरा	4.00	4.00	12.00
उ० प्र०	7.30	10.95	18.25
पं० बंगाल	5.00	5.00	7.00
सिक्किम	5.06	——	20.23
मणिपुर	5.00	5.00	6.00

स्रोत : Agricultural Statistics at a Glance - May 1992.

उपविभाजन और विखण्डन का समाधान :- Remedies for Sub-division and fragmentation :-

(i) लाभकर जोतों की स्थापना :- लाभकर जोतों के लिए निम्नलिखित महत्वपूर्ण उपाय करने होंगे :-

(i) जोतों की अधिकतम सीमा निर्धारित करना (भू-जोतों की सीमाबन्दी)

(ii) ऐसे किसान जिनके पास बहुत छोटे खेत हैं अपनी जमीन छोड़कर उन्हें दूसरे धन्धों को अपनाने की प्रेरणा दी जानी चाहिए।

(iii) गाँव में भूमिहीन मजदूरों व छोटे किसानों को काम दिलाने के लिए उद्योग

धन्धे शुरू किये जाने चाहिए। ताकि खेती पर जनसंख्या का दबाव कम किया जा सके)

(ii) चकबन्दी (Consolidation) चकबन्दी को लम्बे समय से बिखरे खेतों की समस्या का समाधान माना जाता रहा है। इसके अन्तर्गत पहले गाँव की सारी जमीन को एक भूखण्ड में एकत्र कर लिया जाता है और बाद में गाँव के सारे किसानों में सुगठित भूखण्ड के रूप में विभाजित कर दिया जाता है। चकबन्दी आन्दोलन बहुत से राज्यों विशेषकर पंजाब में काफी प्रगति पर है। पूरे देश में अभी कृषि-आधीन क्षेत्रफल का 4/3 चकबन्दी के आधीन लाया गया है।

(iii) सहकारी खेती: (Co-oprative Farming) सहकारी खेती से आशय उन कृषि प्रणालियों से है जिसके अन्तर्गत कृषि क्षेत्र के भूमिधारक किसान स्वेच्छा से अपनी जमीनें एक में मिलाकर संयुक्त रूप में खेती करते हैं। वे अपनी जमीनों के अलग-अलग मालिक बने रहते हैं। केवल खेती बाड़ी के लिए वे अपनी जमीनें एक में मिलाते हैं। खेती-बाड़ी का कार्य सदस्यों द्वारा योजनानुसार किया जाता है। सदस्यों को उनके कार्य के बदले मजदूरी तथा उनकी भूमि के बदले लाभांश दिया जाता है। सहकारी खेती से छोटी एवं दूर-दूर बिखरी हुई जोतों की समस्या स्थाई तौर से हल हो जाती है तथा व्यक्तिगत तौर से खेती करने पर होने वाले अपव्यय कम हो जाते हैं। कृषि क्षेत्र में होने वाली वृद्धि से उत्पादन, वितरण, व्यापार व विभिन्न सेवाओं में रोजगार के अवसर बढ़ेंगे।

भू-जोतों की सीमा बन्दी:- वास्तव में जोतों की सीमाबन्दी भारत में भूमि सुधार के कार्यक्रम का एक आवश्यक और महत्वपूर्ण अंग है; जोत की सीमाबन्दी में मूल भावना यह है कि किसी भी भू-स्वामी के पास एक निश्चित सीमा से अधिक भूमि का संकेन्द्रण न हो सके। एक कृषक जोतधारक के स्वामित्व में अधिकतम कितनी भूमि जोत हो, यही सुनिश्चित एवं निर्धारित करना जोतों की सीमाबन्दी का प्रमुख लक्ष्य है। उससे अधिक जोत के अंश को सरकार अधिग्रहीत कर लेती है और फिर उस भूमि का पुनर्वितरण भूमिहीन कृषकों में किया जाता है:- कृषि अर्थशास्त्री सी. एच. हनुमंत राव का तर्क काबिले गौर है कि "कृषि उत्पादन की प्राविधिक स्थितियाँ ऐसी हैं कि छोटे खेतों में कृषि उतनी ही कुशलता के साथ अथवा अधिक कुशलता के साथ सम्भव है जितनी कि बड़े खेतों में। अनेक फार्म प्रबंधन अध्ययनों में उपलब्ध तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि "खेतों के आकार और उत्पादकता में विपरीत

प्रबंधक है।"

प्रो. ए. के. सेन का मानना है कि जहाँ बड़े फार्मों पर पूँजीवादी ढंग से खेती होती है वहीं छोटे फार्मों पर प्रायः किसान के परिवार के लोग ही कार्य करते हैं। लिहाजा, छोटे फार्मों पर किसान उस सीमा तक कार्य करता है जबतक कि उसकी सीमान्त उत्पादकता शून्य नहीं हो जाती। इसके विपरीत बड़े फर्मों पर उस सीमा तक श्रम किया जाता है, जहाँ पर कृषि श्रमिकों की उत्पादकता उनकी मजदूरी की प्रचलित दर के बराबर हो जाती है। अतः छोटे फार्मों पर (सीमाबन्दी के बाद) प्रति एकड़ उत्पादकता अधिक होती है तथा इस प्रकार वे आर्थिक दृष्टि से अधिक कुशल होते हैं।

⇒ साधारणतया छोटे फार्मों में बड़े फार्मों की अपेक्षा अधिक फसलों की खेती की जाती है। इससे या तो हरी खेती के फलस्वरूप प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ जाती है इसके विपरीत बड़े फार्मों में ऐसा नहीं हो पाता है।

⇒ अन्तिम कारण के रूप में - छोटी जोत के सम्बन्ध में कुल जोत क्षेत्र के रूप में शुद्ध जोती - बोई भूमि का अनुपात अधिक होता है और फार्म के आकार में वृद्धि होने के साथ यह अनुपात सामान्यतः गिरता जाता है। छोटी जोतों के साथ भूमि-उपभोग का अनुपात ऊँचा होने के कारण प्रति हेक्टेयर उपज भी अधिक होती है।

⇒ भूमि जोतों की उच्चतम सीमा का निर्धारण कानून सर्व प्रथम जम्मू-कश्मीर में लागू किया गया। सन 1948 में इस राज्य में भूस्वामित्व की 22.75 एकड़ सीमा निर्धारित की गयी थी और प्रभावोत्पादक ढंग से कार्यान्वित भी की गयी।

अतः इस प्रकार देश में कृषि भूमि पर जनसंख्या के अत्यधिक बढ़ते दबाव की माँग है कि भू-तल का विन्यास तथा उपयोग सुनियोजित और विवेकपूर्ण ढंग से होना चाहिए। इस प्रकार सामाजिक न्याय और आर्थिक कुशलता दोनों दृष्टियों से जोत की उच्चतम सीमा का निर्धारण करना उचित है। इससे एक ओर जहाँ वर्तमान आर्थिक तथा सामाजिक असमानताएं कम होगी, वहाँ प्रगतिशील ग्राम्य अर्थव्यवस्था के निर्माण की सम्भावना बढ़ेगी।

निष्कर्ष रूप में कहा जाता है कि यद्यपि कुशलता और लाभकारिता की दृष्टि से छोटे आकार के खेत या फार्म अधिक ठीक नहीं रहते, लेकिन उत्पादिता के आधार पर इनकी स्थिति बहुत अच्छी है, हमारी कृषि की परिस्थितियों को देखते हुए जहाँ श्रम की बहुलता हो भूमि की उत्पादिता में वृद्धि लाना बहुत जरूरी है, अतः इसके लिए छोटे आकार के फार्म अपेक्षाकृत अधिक उपयोगी होंगे।

हरित क्रान्ति या नई कृषि नीति के प्रमुख तत्व :- "Perspective of New Strategy in Agriculture"

हरित क्रान्ति या नई कृषि नीति के मुख्य तत्व निम्नलिखित है।

(i) अधिक उपज देने वाली किस्में :- अधिक उत्पादन देने वाली किस्मों के अन्तर्गत 1966-67 में केवल 19 लाख हेक्टेअर भूमि में कृषि की गयी थी। जबकि 1981-82 में 5.10 करोड़ हेक्टेअर भूमि में फसलें बोयी गयी और 1984-85 में 5.87 करोड़ हेक्टेअर भूमि में अधिक उपज देने वाली खाद्यान्न फसलों में — गेहूँ, धान, बाजरा, मक्का तथा ज्वार के बीजों का प्रयोग आरम्भ किया गया। इसमें धान तथा गेहूँ को विभिन्न किस्में हैं। अधिक उपज देने वाले बीजों का कार्यक्रम तीव्र गति से विस्तृत हुआ है इसका स्पष्ट प्रमाण यह है कि इनके अन्तर्गत आने वाले विभिन्न फसलों के क्षेत्र में वृद्धि हुई है। 1990-91 में अधिक उपज देने वाली किस्मों के बीजों के अन्तर्गत 6.39 करोड़ हेक्टेअर तथा 1992-93 में 7.16 करोड़ हेक्टेअर भूमि पर खेती की गयी। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत में अधिक उपज देने वाली बीजों के क्षेत्रफल में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

(ii) सुधरे हुए बीज :- हरित क्रान्ति की सफलता अधिक फसल देने वाली किस्म तथा उनके उत्तम बीजों पर निर्भर करती है। इस दृष्टि से देश में 4000 कृषि फार्म स्थापित किये गये हैं। तराई विकास निगम तथा राष्ट्रीय बीज निगम का इस क्षेत्र में विशेष योगदान है। तराई विकास निगम द्वारा गेहूँ, चावल, मक्का तथा सोयाबीन आदि के श्रेष्ठ बीज उत्पन्न किये गये हैं। 1984-85 में 48.5 लाख टन सुधरे बीज वितरित किये गये।

(iii) रासायनिक खाद :- चेस्टर बैम्स का कथन है कि "खाद के पर्याप्त प्रयोग से उत्पादन की मात्रा तिगुनी की जा सकती है।" एक अनुमान के अनुसार भारत में उर्वरक के प्रयोग का औसत 64 Kg। हेक्टेअर कृषि भूमि पर व 76 kg हेक्टेअर रोटेबिल भूमि पर है। जो अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। (1993-94 के अनुसार) स्रोत - फर्टिलाइजर स्टेटिस्टिक्स 1994-95 FAI नई दिल्ली।

(Intensive Agriculture District programme)

(iv) गहन कृषि जिला कार्यक्रम (I.A.D.P.) इस कार्यक्रम का तात्पर्य यह है कि जिन क्षेत्रों में भूमि अच्छी है तथा सिंचाई की सुविधाएं पर्याप्त है वहां पर कुछ विशेष बातों पर ध्यान देना आवश्यक है:-

(क) कृषि विकास में पंचायतों का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करना चाहिए।

(ख) प्रत्येक गाँव के लिए कृषि उत्पादन योजना बनानी चाहिए।

(ग) पशु-पालन तथा दुग्ध वितरण के कार्यक्रमों को विकसित करना चाहिए।

(घ) कृषि से सम्बन्धित विभिन्न कार्यक्रम (भूमि सुधार, वन रोपण, सिंचाई) आरम्भ किये जाने चाहिए।

(ङ) उन्नतशील बीज, उर्वरक, कीटनाशक दवाइयाँ, उपकरण, ऋण आदि उपलब्ध करना चाहिए।

(v) लघु सिंचाई:- इस कार्यक्रम के अन्तर्गत नलकूप, छोटी नहरें, तथा तालाब आदि की व्यवस्था की जाती है। 1984-85 में लघु सिंचाई योजनाओं के द्वारा 35.2 लाख हेक्टेअर भूमि को लाभ प्राप्त हुआ था।

(vi) कृषि शिक्षा तथा शोध:- भारत में अक्टूबर 1975 से कृषि अनुसंधान सेवा का गठन किया गया है। देश में 30 कृषि विश्वविद्यालय स्थापित किये जा चुके हैं। जिनमें जबलपुर, अकोला (महाराष्ट्र) पन्तनगर (उ० प्र०) हिसार (हरियाणा) लुधियाना, उदयपुर (राजस्थान) व भुवनेश्वर मुख्य है।

(vii) पौध संरक्षण:- इसके अन्तर्गत भूमि तथा फसलों पर दवा छिड़कने का कार्य किया जाता है। टिड्डी दल को नष्ट करना तथा फसलों को रोगों से रोकने के उपाय इसमें शामिल है। इस हेतु हैदराबाद में केन्द्रीय पौध संरक्षण प्रशिक्षण संस्थान कार्यरत है।

(viii) भू-संरक्षण:- चतुर्थ योजना में (1969-74) कुल 64 लाख हेक्टेअर भूमि की रक्षा करने की व्यवस्था की गयी। और इस कार्य पर 158 करोड़ रुपये खर्च किये गये। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत राजस्थान, गुजरात, म० प्र०, उ० प्र०, आदि राज्यों में खेती योग्य भूमि को खराब होते

स्थानों के लिए अनेक योजनाएँ बनाई गयी है। तथा बंजर भूमि को साफ तथा समतल कर खेती के योग्य बनाया जा रहा है। 1960-61 में 242 लाख हेक्टेयर तथा 1984-85 में 294 लाख हेक्टेयर भूमि पर भू-संरक्षण कार्यक्रम चलाया गया।

इसके अतिरिक्त अन्य तत्व जैसे ग्रामीण क्षेत्रों का विद्युतीकरण, कृषि-वित्त की व्यवस्था, आधुनिक कृषि मशीनों का उपयोग तथा बहु फसली कार्यक्रम आदि प्रमुख है।

भारत में हरित क्रान्ति की असफलता के कारण :-

भारत में हरित क्रान्ति पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पायी है इसकी असफलता के प्रमुख कारण इस प्रकार है।

(i) हरित क्रान्ति का प्रभाव कुछ ही फसलों (गेहूँ, ज्वार, बाजरा) तक सीमित रहा है। गन्ना, जूट कपास तिलहन व दालों के उत्पादन पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।

(ii) हरित क्रान्ति का प्रभाव विश्वसनीय सिंचाई वाले विकसित भू-भागों (पंजाब, हरियाणा, तमिलनाडु व आन्ध्र-प्रदेश) तक ही सीमित रहा है।

(iii) कृषि विकास की गति अत्यधिक धीमी है।

(iv) अधिकांश कृषि योग्य भूमि पर स्वामित्व बड़े भू-स्वामियों का है जिससे गरीब और गरीब तथा अमीर और अमीर बनते जा रहे हैं।

सर्वाधिक उत्पादन का सिद्धान्त :- Maximum Production Theory.

सर्वाधिक उत्पादन की अवधारणा फसल विशेष के उत्पादन के लिए भूमि उपयुक्तता पर आधारित होती है। आज भूमि उत्पादकता का निर्धारण मुद्रा के सन्दर्भ में किया जाता है। वास्तव में यह सिद्धान्त भूमि उपयोग आयोजना का मूलभूत सिद्धान्त है। किसी भी क्षेत्र में सर्वाधिक उत्पादन लक्ष्य की प्राप्ति का आधार निम्नलिखित प्रकार होना चाहिए।

(क) कृषि क्षेत्र तथा कुल फसल क्षेत्र में वृद्धि करके

(ख) शस्य स्वरूप में परिवर्तन करके। तथा

(ग) प्रति हेक्टर उत्पादन में वृद्धि करके।

सर्वाधिक उत्पादन सिद्धान्त का दूसरा महत्वपूर्ण सोपान शस्य स्वरूप में वांछनीय परिवर्तन से सम्बन्धित है। किसी क्षेत्र में अनुकूलतम शस्य-स्वरूप का निर्धारण शोधकर्ताओं के समक्ष एक अत्यन्त विकट समस्या है। वस्तुतः संक्षिप्त रूप में कहा जा सकता है कि फसल नियोजन प्रस्तुत करते समय अधिक उपज देने वाली खाद्य एवं अखाद्य फसलों को प्राथमिकता मिलनी चाहिए जिससे कृषक को सर्वाधिक आय प्राप्त हो तथा साथ ही साथ फसलें वहाँ की मिट्टी एवं जलवायु में पूर्णरूपेण समायोजित हों।

सिंह महोदय के अनुसार उपज में 5 से 10% वृद्धि उन्नतिशील बीजों के बोने से प्राप्त की जा सकती है।

भूमि उपयोग विज्ञान में आस्था रखने वाले सभी विद्वानों ने यह सुझाव दिया है कि इस लक्ष्य की प्राप्ति कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं के माध्यम से हो सकती है, जो निम्नवत हैं—

(क) सिंचाई सुविधाओं में सुधार।
(ख) खाद एवं उर्वरक की उपयुक्त मात्रा का प्रबंध।
(ग) उन्नतिशील बीजों की उपलब्धि।
(घ) कृषि यंत्रों में सुधार एवं यंत्रीकरण।
(च) मिट्टी की सुरक्षा तथा जल निकास में सुधार।
(छ) फसल-चक्र सुधार आदि।

प्रो॰ सिंह ने जौनपुर तहसील की भूमि उपयोग आयोजना प्रस्तुत करते हुए सुझाव दिया है कि — यहाँ

(a) शुद्ध बोयी गयी भूमि में 9.1% की वृद्धि हो सकती है।
(b) दुहरी खेती तथा जायद क्षेत्र में भी क्रमशः 9.41 तथा 41.63% की वृद्धि सम्भावित है।
(c) बाग, चारागाह, यातायात मार्ग तथा अधिवास क्षेत्र में क्रमशः 5.9, 33.3, 12.4 तथा 9.0% की वृद्धि होगी।
(d) ऊसर एवं बंजर भूमि में क्रमशः 46.1, 42.3, 71.7, 33.3 तथा 47.6% का ह्रास होगा।

कड़ौत विकास खण्ड के बावली ग्राम के प्रस्तावित शस्य स्वरूप का विव

इस ग्राम में केवल ४०% भूमि पर खेती होती है। यदि कुल बंजर तथा अकृषि भूमि में से १६५ एकड़ को कृषियोग्य बनाया जाये तब कुल बोया गया क्षेत्र ७०.३४% हो जायेगा। यहाँ अतिरेक कैलोरी वाले ग्रामों में शुद्ध कृषि भूमि ९०% है। शेष १०% भूमि पर फसलोत्पादन के अलावा सभी उपयोगों की आवश्यकता अनुकूलित रूप से पूरी की जा सकती है। बावली कैलोरी के दृष्टिकोण से कमी वाला गाँव है। यहाँ प्रति हेक्टेयर जनसंख्या घनत्व १३ मनुष्य है। अधिक जनसंख्या घनत्व तथा कम कैलोरी को देखते हुए शस्य स्वरूप को इस रूप में प्रस्तावित किया गया है कि खाद्य फसलों का क्षेत्र बढ़ाकर खाद्यान्न के उत्पादन को बढ़ाया जाय तथा अखाद्य एवं चारा के अन्तर्गत क्षेत्र कम करके अधिकाधिक उत्पादन किया जाय।

यहाँ प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन कैलोरी की मात्रा २२४१ है जबकि साधारणतया २७५२ कैलोरी की आवश्यकता पड़ती है। अर्थात् ग्राम में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन कैलोरी आत्मनिर्भरता के लिए ५११ अतिरिक्त कैलोरी का प्रबंध आवश्यक होगा। बहुफसली क्षेत्र में वृद्धि करके इसकी प्राप्ति की जा सकती है।